पूर्वोत्तर प्रभा
(सिक्किम विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)
Journal Home Page: **http://supp.cus.ac.in/**

# प्रेम-सौन्दर्य और दु:ख से संवाद करती कविताएँ : 'दु:ख चिट्ठीरसा है'

**दिनेश अहिरवार**
पीएच.डी. शोधार्थी, हिन्दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र)
ईमेल: chaudharydinesh544@gmail.com

**शोध सारांश:** 'दु:ख चिट्ठीरसा है' अशोक वाजपेयी का तेरहवाँ काव्य-संग्रह है, जो सन् 2008 ई. में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। 'दु:ख चिट्ठीरसा है' काव्य-संग्रह में छोटी-बड़ी कुल मिलाकर 97 कविताएँ संकलित हैं जिसमें एक ओर प्रेम के उल्लास का प्रकाश है तो वहीं अवसाद से ग्रस्त छाया भी। इस संग्रह कविताओं में सामाजिक और निजी का द्वैत नहीं दिखता बल्कि अनुभव और विचार दोनों एक साथ ही शब्दों के मार्फ़त प्रकट हुए हैं। इस काव्य-संग्रह में 11 प्रेम कविताएँ और 11 अनुपस्थिति पर केन्द्रित कविताएँ भी हैं, जो अशोक वाजपेयी की कविता का मुख्य विषय रही हैं, प्रेम, मृत्यु और जीवन। अन्य कविताएँ भी इन्हीं विषयों के इर्द-गिर्द घूमती हुई प्रतीत होती हैं। अशोक वाजपेयी के इस काव्य-संग्रह में उनकी काव्य-यात्रा का अहम पड़ाव दृष्टिगोचर हुआ है। इस संग्रह की कविताओं में रागात्मकता का व्यापक विस्तार देखने को मिलता है। एक ओर जहाँ जीवन की विफलता का एहसास, दु:ख,अवसाद और पछतावे के सिवाय कुछ नजर नहीं आता है, वहीं दूसरी ओर दु:ख और अवसादग्रस्त समय में भी प्रेम करने की जिद,एक वरिष्ठ कवि का प्रेम के प्रति अति लगाव दृष्टव्य है।

**सूचक शब्द:** प्रेम, जीवन, मृत्यु, दु:ख, अनुपस्थिति, अवसाद, समाज, कविता।

## मूल लेख

अशोक वाजपेयी की काव्य-यात्रा का सफ़र साठ के दशक में 'शहर अब भी संभावना है' से प्रारम्भ होकर अब भी अनवरत रूप से जारी है। अशोक वाजपेयी मूलतः प्रेम और मनुष्य जीवन के कवि हैं। इस बात को कई आलोचकों ने उनकी कविताओं के मार्फ़त सिद्ध करने का प्रयास भी किया है, मैं भी स्वीकार करता हूँ। हाँ, यह भी है कि जो लोग प्रेम पर केन्द्रित कविताओं पर महज़ दैहिक प्रेम का आरोप लगाते हैं, मैं उनके पक्ष में बिल्कुल भी नहीं हूँ। क्योंकि उनकी कविताओं में महज़ दैहिक प्रेम की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि मनुष्य जीवन और प्रकृति के प्रति प्रेम की भी अद्भुत छवियाँ मौजूद है। अशोक वाजपेयी के इस काव्य-संग्रह में उनकी काव्य-यात्रा का अहम पड़ाव दृष्टिगोचर हुआ है। जहाँ पर कविताओं में रागात्मकता का व्यापक विस्तार देखने को मिलता है। जीवन की विफलता का एहसास, दु:ख, अवसाद और पछतावे के सिवाय कुछ नजर नहीं आता है।

वहीं दूसरी तरफ दु:ख और अवसाद से ग्रस्त समय में भी प्रेम करने की जिद एक वरिष्ठ कवि का प्रेम के प्रति अति लगाव का प्रतिफल है। अशोक वाजपेयी सुख-दु:ख, कामना और विरक्ति के कवि हैं। उनकी कविता में दु:ख के अवाक होते जाहे शब्दों में मौन के संगीत की ध्वनि है। जिस तरह सुख हमारा साथी है उसी तरह दु:ख भी। सुख और दु:ख दोनों बारी-बारी से आते हैं। हाँ, यह जरूर होता है कि कभी सुख देर तक ठहर जाता है तो कभी दु:ख। सुख कब आता है यह तो हमें पता नहीं चलता लेकिन दु:ख का एहसास जल्दी हो जाता है। हम इस भौतिक संसार में रहने के लिए कहीं भी चले जाये लेकिन सुख-दु:ख हमारा पीछा कभी नहीं छोड़ते, क्योंकि हमारा यह भौतिक शरीर सुख और दु:ख का घर है, वह अपने घर को छोड़ नहीं जा सकता, उसे भूल नहीं सकता।

अपनी कविताओं के मार्फ़त एक अवसादग्रस्त कवि ऐसी जगह जाना चाहता है जहाँ नीरव अंधकार में चट्टानें विलाप कर रहीं हों। जहाँ प्रकृति की हरीतिमा अच्छादनों के पार सिसक रही हों। कवि उम्र के चाहे जिस पड़ाव पर रहे लेकिन फिर भी वे अपनी कविता में प्रेम को अभिव्यक्त करना नहीं छोड़े हैं, वह चाहे प्रकृति से हो, पशु-पक्षियों से हो या फिर जीवन और मृत्यु से हो। अशोक वाजपेयी की कविताओं में प्रेम का एक बुनियादी सरोकार रहा है। 'संवाद' अशोक वाजपेयी के इस काव्य-संग्रह का केन्द्रीय भाव कहा जा सकता है। खास तौर पर कहा जाये तो अशोक वाजपेयी इन कविताओं में सुख और दु:ख से निरंतर संवाद स्थापित करते रहे हैं। उनकी इस काव्य-संग्रह की कविताओं में पुकारना, बुदबुदाना, आऊँगा, जाऊँगा इत्यादि शब्द संवाद के प्रतीक हैं। 'संवाद' मनुष्य और मनुष्य के बीच तो होता ही है लेकिन पेड़-पौधे, पशु-पक्षियों, नदी-झरनों और दु:ख से संवाद करना मानवीय कर्म में एक महत्वपूर्ण कार्य है, जो इंसान के जीवित होने का भी प्रमाण है। उदय प्रकाश की एक कविता है 'मरना' जिसमें वे लिखते हैं कि 'आदमी / मरने के बाद कुछ नहीं सोचता / आदमी / मरने के बाद कुछ नहीं बोलता / कुछ नहीं सोचने और कुछ नहीं बोलने पर / आदमी मर जाता है।' अशोक वाजपेयी इस सबसे पृथक एक ऐसा काव्य-संसार निर्मित करते हैं जहाँ पर असंभव चीजों के न होने पर भी उनकी कविताएँ दस्तक देती हैं। वे अपनी कविताओं में उन तमाम चीजों और देवताओं को पुकारते हुए देखे जा सकते हैं जिन्हें अब कोई पुकारना ही नहीं चाहता है –

"तुम्हें पुकारना चाहता हूँ
न्यौता देना चाहता हूँ
देवताओं, पक्षियों, वनस्पतियों, नक्षत्रों को,
गाना चाहता हूँ
अज्ञात भाषाओं, अनाम स्वरलिपियों में असंख्यगान।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 78)

दु:ख जब आता है तब हमें पता ही नहीं चलता लेकिन वह स्वयं हमें अपने होने की खबर देता है। दु:ख एक चिट्ठी की तरह होता है। यह मनुष्य को अपने होने की सूचना देता है क्योंकि यदि दु:ख नहीं आयेगा तो मनुष्य दुनिया से बेखबर ही रहेगा। अधिकांश लोग दु:ख के समय में ही किसी को याद करते हैं, इस काव्य-संग्रह में कवि समय, समाज, व्यक्ति और उसके सुख-दु:ख के साथ मानवीय संबंधों से भी संवाद करते नजर आते हैं। जो एक कवि को कर पाना बहुत ही मुश्किल होता है लेकिन अशोक वाजपेयी जीवन के प्रति अनुराग के कवि

हैं जिसमे सुख और दु:ख को भी साथ लेकर चलते हैं। वे अपनी कविता में लिखते हैं कि दु:ख चिट्ठीरसा के समान है–

"दु:ख चिट्ठीरसा है
हमें खबर देता है अपने होने की।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 134)

सुख और दु:ख एक ही सिक्के के दो पहलू हैं या यों कहें कि इस संसार में लगभग सभी चीजों के जोड़े होते हैं। किसी एक के अभाव में दूसरे का कोई अस्तित्त्व ही नहीं रह जाता है। जीवन के लिए सुख जितना अनिवार्य है उतना ही दु:ख भी। क्योंकि यदि दु:ख नहीं होगा तो सुख की अनुभूति कैसे हो सकेगी। वह दु:ख ही है जो सुख के होने का आभास कराता है। दु:ख का बार-बार लौटना सुख की दस्तक है। सुख महज़ अतीत बनकर रह जाता है लेकिन दु:ख हमेशा आता-जाता हुआ बना रहता है –

"दु:ख लौटता है हर बार जैसे भटककर वापस घर आया हो
सुख की तो याद भी दु:ख देती है
सुख हमेशा अतीत है
दु:ख हमेशा वर्तमान।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 134)

दु:ख का कोई इतिहास नहीं होता, वह तो आता है और चला जाता है, किसी मेहमान की मानिंद। जैसे पानी स्वत: सूख जाता है वैसे ही दु:ख का जाना भी निश्चित होता है। दु:ख के कारण हम बाकी की जिंदगी को उल्लास के साथ जीना छोड़कर दु:ख का रोना लेकर बैठ जाते हैं लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु भी निश्चित है। यदि दु:ख न हो तो सुख की कभी अनुभूति ही नहीं होगी। इसलिए दु:ख का होना उतना ही जरूरी है जितना कि सुख का होना। वे लिखते हैं कि –

"दु:ख का कोई इतिहास नहीं न विलाप का -
जैसे न पानी का, न धूप का :
वह सिर्फ याद दिलाता है
कि हम जीने के साथ ही शुरुआत करते हैं मरने की
और अक्सर मर-मरकर ही जीते रहते हैं।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 135)

एक समय था जब हम आदिम अवस्था में रहते हुए भी ख़ुशी से अपना जीवन व्यतीत करते थे । जैसे-जैसे हम सभ्यता के विकास की ओर बढ़ते गए, वैसे-वैसे मनुष्यता पर संकट गहराता गया है। आग की खोज मानव इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। पहले हम अँधेरों से दूर भागते थे लेकिन अब हम लगातार अँधेरों की ओर अग्रसर हैं। एक ऐसा अँधेरा जो मानवता और समाज की दुर्गति की ओर ले जा रहा है। आज हमारे समाज में ऐसे अँधेरे लगातार बढ़ते ही जा रहे हैं। आज का मनुष्य चकाचौंध भरी दुनिया में जीना पसंद कर रहा है और बढ़ते हुए अंधेरों का सहर्ष स्वागत कर रहा है, जो न तो मनुष्य के लिए और न समाज के लिए हितकर है। वे लिखते हैं कि–

"रोशनी की हमारी खोज ख़त्म हो चुकी है

अब हम अँधेरा ही ओढ़ते-बिछाते हैं
अँधेरे में ही टटोल लेते हैं अपनी उम्मीद
अँधेरे में ही छू लेते हैं अपने प्रेम
और अँधेरे से ही लिख लेते हैं जैसे-तैसे अपनी इबारतें।" (वाजपेयी, 2008, पृ.130)

यहाँ पर अँधेरा हमारे अंतर्मन में बढती हुई चकाचौंध की कालिमा का प्रतीक है। एक ऐसी चकाचौंध जिससे कोई अछूता नहीं रहा है। आज की चकाचौंध भरी दुनिया ने सब कुछ लील लिया है। विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और औद्योगिकीकरण से बढ़ते संकटों ने लोगों का जीना मुहाल कर दिया है।

कविता महज़ किसी कवि का भाव या विचार नहीं है बल्कि उसके साथ उसका भूत, वर्तमान और भविष्य भी एक साथ मौजूद रहता है। 'कविता का गल्प' पुस्तक में संकलित 'कविता का देश' शीर्षक लेख में अशोक वाजपेयी लिखते हैं कि "कविता को विचार का अनुशासन नहीं माना जाता और प्राय: उसमें व्यक्त या चरितार्थ विचार कवि के निजी हों यह जरूरी नहीं है। पर कवि स्वतंत्र होता है कि वह कहीं से भी अपने लिए विचार चुने और उनका कविता में अभ्यंतरीकरण करे।" (वाजपेयी, 2016, पृ. 28) साहित्य और समाज का घनिष्ठ संबंध होता है और समाज में घटित ऐतिहासिक घटनाएँ साहित्य में दर्ज होती हैं। समाज और मनुष्यता के इतिहास में कविता की अहम् भूमिका रही है। हमारे समाज के ऐसे कई ऐतिहासिक तथ्य हैं जिन्हें कविता ने स्थान दिया है। कविता चाहे तो इतिहास को दर्ज नहीं करती लेकिन कविता या साहित्य सबको जगह देता है। क्योंकि ऐसा संभव ही नहीं चूँकि समाज में जो घटित होता है वही साहित्य में दर्ज होता है। एक कवितांश दृष्टव्य है –

"कविता चाहे तो इतिहास को उसी कूड़ेदान में फेंक दे,
लेकिन कविता सबका लिहाज़ करती है,
इतिहास का भी।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 16)

'काका से' कविता एक ऐसी कविता है जिसमें जीवन की निराशा और विफलताओं का अख्यान प्रस्तुत किया गया है। इस कविता के माध्यम से हमारे अशोक वाजपेयी समाज में लगातार टूटते हुए रिश्तों की शिनाख्त तो करते ही हैं लेकिन अपनी गरिमा को प्रतिस्थापित करने में संघर्षरत लोगों के संबंध में कहते हैं 'कि जीवन में अभिजात्य तो आ जाता है, गरिमा आती है बड़ी मुश्किल से'। हम विफलताओं और अच्छी चीजों के बजाय किसी के द्वारा किए गए अपमान को अधिक दिनों तक या यों कहें कि ताउम्र स्मरण रखते हैं जिसे भूल जाना चाहिए उसे हमेशा के लिए हृदय में गाँठ बांधकर रख लेते हैं। जो ज़िन्दगी भर सालता रहता है, अंत में दु:ख और पछतावे के अलावा कुछ नहीं बचता है। वे लिखते हैं कि –

"अब जब हमारे बीच कुछ और नहीं बचा है
थोड़े से दु:ख और पछतावे के सिवाय
और हम भूल चुके हैं।" (वाजपेयी, 2008, पृ.18)

कवि-आलोचक पंकज चतुर्वेदी अपनी पुस्तक 'निराशा में भी सामर्थ्य' में संकलित 'जैसे कोई ब्रह्मारण्य में रोता है' शीर्षक लेख में लिखते हैं कि "अपने समय के रूप में कवि जिस ट्रेजडी का गवाह है और अपनी कविताओं की मार्फ़त हमें मुत्मइन करता है कि वह है; उसकी परिणति के तौर पर उसके यहाँ विलाप है और उसके प्रतिकार के साधन के तौर पर प्रार्थना। प्रार्थना की तीन मुश्किलें हैं। पहली, वह किसी को संबोधित नहीं है। दूसरी, वह शब्दहीन है। तीसरी, उसके लिए कहीं जगह नहीं बची, जैसे कि कवि के ही मुताबिक कविता के लिए भी नहीं बची। विलाप की मुश्किल यह है कि वह विलाप के रूप में पहचाने जाने से इनकार करता है और अपने को प्रार्थना मान लिए जाने पर इसरार करता है।" (चतुर्वेदी, 2013, पृ. 191) अर्थात कवि अपनी कविताओं में विलाप करते हुए प्रतीत होता है लेकिन उसे प्रार्थनाओं की संज्ञा देता है। ऐसी शब्दहीन और बेनाम प्रार्थनाएँ जो किसी दैवीय शक्ति को भी संबोधित नहीं है। ऐसी प्रार्थनाओं को विलाप नहीं तो फिर क्या कहा जायेगा ? 'यह विलाप नहीं है' कविता में वे लिखते हैं कि –

"यह विलाप नहीं है
यह एक नीरव प्रार्थना है
जो किसी देवता को संबोधित नहीं है :
उसमें कोई शब्द भी नहीं है कातर या व्याकुल,
वह एक दिग्हीन चीख़ है
किसी पक्षी की जो दूर देस से लौटने पर पाता है
कि तिनका-तिनका जोड़कर बनाया उसका घोंसला
आँधी उड़ा ले गई।" (चतुर्वेदी, 2013, पृ. 137)

अशोक वाजपेयी की कविताएँ उन तमाम अनसुनी आवाजों की पुकार है जिसे कोई नहीं सुनना चाहता। आज हम जिस समय में जी रहे हैं वह बढ़ते हुए भयावह अँधेरों और जरूरी आवाजों या हस्तक्षेपों के दमन का समय है। सच को झूठ के पर्दे से ढकने का समय है । असंख्य मृत्यु के बाद भी चारों ओर पसरी हुई चुप्पियों का समय है। यह गरीब, मजबूर और लाचारों का नहीं आततायियों का समय है। इन तमाम गहराते अँधेरों और चुप्पियों के बरक्स अशोक वाजपेयी की कविताएँ अपनी आवाज बुलंद करती हैं तथा हमारे समय और समाज में फैले हुए तमाम के अँधेरों के बरक्स रोशनी का काम करती हैं। 'कोई नहीं सुनता' कविता में वे लिखते हैं कि-

"कोई नहीं सुनता चीख –
सुनती है खिड़की के बाहर
हरियाये पेड़ पर अचानक आ गई नीली चिड़िया,
जिसे पता नहीं कि यह चीख़ है
या कि आवाजों के तुमुल में से एक और आवाज़।" (चतुर्वेदी, 2013, पृ. 23)

अशोक वाजपेयी की कविताएँ मनुष्य के प्रति घृणा, अन्याय और तिरस्कार का पुरजोर विरोध और सत्याग्रह करती हैं। वे युद्ध या नरसंहार के पक्ष में कभी भी नहीं रही हैं बल्कि प्रेम और उन्मुक्त आकाश की तलाश में रहती हैं। वे अपनी कविताओं के सन्दर्भ में अपने लेख 'सूर्यदीप्त कविता' में महात्मा गाँधी के हवाले से लिखते हैं कि "कविता इतिहास की तानाशाही, विचारधाराओं के उपनिवेशवाद और धर्मान्धता के विरुद्ध एक असमाप्य सत्याग्रह है। वह मनुष्य और उसके पर्यावरण को बचाने, भाषायी परिवेश का उसकी पूरी बहुलता में संरक्षण करने और सारे जीवन की, जिसमें मनुष्य और मनुष्येतर जीवन शामिल है, पवित्रता की निरंतरता के लिए भी सत्याग्रह है।" (वाजपेयी, 2016, पृ. 41)

प्रेम अशोक वाजपेयी की कविताओं का अनिवार्य विषय है जिसे उन्होंने स्वयं अपने एक साक्षात्कार में स्वीकार भी किया है। जब नामवर सिंह ने अशोक वाजपेयी की कविताओं को 'गेह और देह की कविता' की संज्ञा देते हुए 'विचारशून्य कविता' कहा, तब मदन मोहन जोशी से साक्षात्कार में अशोक वाजपेयी अपनी कविता के विषय के सन्दर्भ में कहते हैं कि "एक ऐसे कवि-समय में जिसमें तथाकथित सामाजिक यथार्थ के आतंक में 'गेह और देह' कविता के अहाते से बाहर कर दिये गए हों, उनके पुनर्वास की कोशिश निरी काव्य-संवेदना का मामला नहीं, दृष्टि का मसला भी है। ऐंद्रिकता, प्रेम, रति, अनुपस्थिति, मृत्यु, प्रकृति आदि मेरी कविताओं के विषय रहे हैं और उन्हें गूँथकर एक विचारदृष्टि विन्यस्त की जा सकती है।" (वाजपेयी, 1998, पृ. 68) मुझे लगता है कि मनुष्य जीवन में प्रेम का उतना ही महत्त्व है जितना कि भोजन-पानी-वायु, क्योंकि यदि प्रेम नहीं रहेगा तो जीवन नीरस हो जायेगा, किसी से किसी को कोई मतलब ही नहीं रह जायेगा। महज़ 'गेह और देह' की कवितायें कहकर एक निश्चित दायरे में सीमित कर देना एक कवि की कविताओं के साथ यह उचित निर्णय नहीं है। अब तक के प्रकाशित सभी काव्य-संग्रहों में ऐसे ही विषयों पर केन्द्रित कवितायें हैं जिन्हें अन्य कवियों ने दरकिनार किया है। अशोक वाजपेयी की कवितायें मनुष्य जीवन की कविताएँ हैं, उन्हें महज 'गेह और देह की कविताएँ' कहकर उनकी कविताओं से मुँह नहीं फेरा जा सकता। 'हमने शुरुआत तो की थी' कविता में वे लिखते हैं कि –

"शायद हमारे पास घृणा काफ़ी नहीं थी –
हम इतने भोले तो नहीं थे
कि दुनिया को प्रेम से
बस में कर पाने का भ्रम पालें
पर हमारे पास बहुत कुछ सिरे से खारिज करने लायक
घृणा नहीं थी।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 36)

समकालीन कविता के परिदृश्य में प्रेम कविताओं के सन्दर्भ में देखा जाये तो अशोक वाजपेयी जैसी प्रेम कविताएँ अन्यत्र खोजना निरर्थक ही होगा। वे अपनी कविताओं में प्रकृति और प्रेम से सम्बंधित आश्चर्यचकित करने वाले ऐसे बिम्ब-प्रतीकों का प्रयोग करते हैं जिन्हें अन्य समकालीन कवियों ने रीति कालीन या पुराने बिम्ब, प्रतीक मानकर दरकिनार कर दिया है। अशोक वाजपेयी उन तमाम अलक्षित बिम्ब, प्रतीकों के

मार्फ़त अन्य कवियों से पृथक एक नया काव्य-संसार रचते हैं। वे 'आकाश में होने से पहले' कविता में लिखते हैं कि –

"आकाश में होने से पहले
सूर्योदय उसकी आँखों में होता है।
संसार में पहले-पहल सूर्योदय का आश्चर्य
उसकी पलकों के नीचे अभी तक ठहरा हुआ है।"
(वाजपेयी, 2008, पृ. 102)

कविता मनुष्य की चेतना और मनुष्य के हृदय में व्यापक विस्तार करती है, आधुनिक युग में मनुष्य जितना मूल्यहीन हुआ है शायद ही पहले कभी रहा होगा, जब मनुष्यता और मूल्यों आदि को ख़त्म करने की साजिशें रची जा रही हों, तब ऐसे में कविता मानवता और मूल्यों की रक्षा करना अपना महत्त्वपूर्ण दायित्व समझती है। अशोक वाजपेयी की कविताओं में प्रयुक्त भाषा के मार्फ़त मानव मूल्यों को कायम रखने की कोशिश बखूबी देखी जा सकती है। कविता-संग्रह के फ्लैप कवर पर अशोक वाजपेयी की काव्य-भाषा और कविताओं के सन्दर्भ में लिखा है कि "जीवनासक्ति और प्रश्नांकन की उनकी परंपरा इस संग्रह में नयी सघनता और उत्कटता के साथ चरितार्थ हुई है। उनकी काव्यभाषा का परिसर अन्तर्ध्वनित भी है और बहिर्मुख भी। सामाजिक को निजी और निजी को सामाजिक मानने पर लगातार इसरार करने वाले इस सयाने कवि का विवेक इस द्वैत को लाँघकर अब ऐसे मुकाम पर है जहाँ कविता अनुभव और विचार एक साथ हैं।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 16, फ्लैप से)

अशोक वाजपेयी अपनी कविताओं में कहीं-कहीं एकदम निरीश्वरवादी दिखाई देते हैं तो कहीं-कहीं हिन्दूवादी परंपरा का निर्वहन करते हुए ईश्वर के रूप में धरती, आसमान और प्रकृति के पूजक भी। प्रेम में रह गई अधूरी प्रार्थनाओंको जिन्हें कोई नहीं सुनता, उन्हें अपनी कविताओं के मार्फ़त आवाज देते हुए दिखाई देते हैं। अशोक वाजपेयी की कविताओं के वितान और उनकी सार्थकता को उनकी एक कविता के हवाले से कहना चाहूँगा कि –

"जिसे कोई नहीं सुनता
उस प्रार्थना को,
जो अधूरी ही रह गई
उस प्राचीन कविता को,
प्रेम में न तोड़ी गई चुप्पी को
इस कविता के बीहड़ से
आवाज़ देता हूँ।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 29)

जीवन की कटु सच्चाई और वास्तविकता यही है कि एक दिन अंत होना निश्चित है जिसे कवि अपनी कविताओं में स्वीकार करते हुए देखा जा सकता है। वे कविता के गल्प के सन्दर्भ लिखते हैं कि "हम कविता के

पास सत्य पाने या खोजने नहीं जाते बल्कि सचाई का अहसास पाने, उसमें शामिल होने जाते हैं। कविता सत्यकथन या संशोधन नहीं करती : वह सचाई से अपने गल्प गढ़ती है।" (वाजपेयी, 2016, पृ. 15) अर्थात अशोक वाजपेयी की कविताओं में जहाँ प्रकृति, प्रेम-सौन्दर्य और मनुष्य जीवन की अनेकों छवियाँ मौजूद हैं वहीं 'मृत्युबोध' की कविताएँ भी संजीदगी के साथ देखी जा सकती है। मृत्यु से लोग भागना चाहते हैं, हिंदी कविता के वितान में मृत्यु पर बहुत कम कविताओं का सृजन हुआ है लेकिन अशोक वाजेपयी मृत्यु से मुँह मोड़ने वाले नहीं बल्कि उसकी वास्तविकता और उसकी निश्चितता से हम सभी को वाकिफ़ कराते हैं कि मृत्यु जीवन का एक ऐसा सच है जिससे हम कभी बच नहीं सकते हैं। यहाँ गौरतलब है कि मृत्युबोध की कविताएँ जीवन की वास्तविकता से वाकिफ तो कराती ही हैं परन्तु हताशा और निराशा का भाव भी पैदा करती हैं। इस तरह की कविताएँ मनुष्य के अन्दर सकारात्मकता की बजाय नकारात्मक ऊर्जा पैदा करती हैं। अशोक वाजपेयी अपनी कविता 'वहीं जाऊँगा' में लिखते हैं कि–

"मैं वहीं जाऊँगा...
वहीं होगी मेरी जगह
होने के सुनसान में,
वहीं होगा मेरा ठिकाना
प्रार्थना और विलाप के बीच,
बढ़ती हुई धुन्ध के नजदीक–
मृत्यु भी शायद वहाँ से ज्यादा दूर न होगी
मैं वहीं जाऊँगा...।" (वाजपेयी, 2008, पृ. 42)

## निष्कर्ष

अंत में अशोक वाजपेयी के 'दु:ख चिट्ठीरसा है' कविता संग्रह की कविताओं के सन्दर्भ में यही कहना चाहूँगा कि ये कवितायें हमारे समय और समाज के सच की यथार्थता का बोध कराती हैं तथा समकालीन कविता के वितान से अलक्षित मानवीय मूल्य, दु:ख,मृत्यु, अवसाद, प्रेम और मानवीय संबंधों की गहन पड़ताल करती हैं। आलोचक पंकज चतुर्वेदी जी के हवाले से कहूँ तो ''दु:ख चिट्ठीरसा है' में कविताओं की भाषा में हिन्दी, संस्कृत के साथ-साथ देशी व लोकभाषा बुन्देली के शब्दों और नवीन बिम्ब, प्रतीकों का प्रयोग कविताओं को और अधिक प्रभावशाली एवं सम्प्रेषणीय बनाते हैं।

## सन्दर्भ-ग्रंथ सूची

वाजपेयी, अशोक. (2008). दु:ख चिट्ठीरसा है. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.

वाजपेयी, अशोक.(2016). कविता का गल्प. नयी दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.

चतुर्वेदी, पंकज. (2013). निराशा में भी सामर्थ्य. हरियाणा: आधार प्रकाशन.

वाजपेयी, अशोक. (1998). मेरे साक्षात्कार. नयी दिल्ली: किताबघर प्रकाशन.